[Shri Nanda]

voicing the feeling that this interruption of work and the incidents connected with it could very well have been avoided. The prime need of the country is production and the last thing that we can afford is stoppages of work, which result not merely in unnecessary loss to the undertaking and to the community but cause serious hardship for the workers. Government itself has provided machinery for conciliation and for adjudication and the fullest use should be made of this machinery before workers take recourse to a strike. I have been a trade unionist myself and I would be the last person to deny the workers' right to strike but this is a right which should be exercised only after every other avenue has been exhausted. Otherwise the workers themselves may suffer. They will run the risk of losing the goodwill and support of the community at large and will make the task of mediators more difficult. It will of course be my very earnest endeavour to see that every possible facility is extended to the workers for obtaining expeditious redress of their grievances and settlement of disputes. The interests of the community as well as of the workers require, however, that direct action, which bypasses the machinery provided for the purpose, should be discouraged and those who, neglecting to avail themselves of the facilities, resort to such action, should not be treated on a par with others.

I have said that recourse should be had to the formal machinery provided by Government but even more important than the use of such formal machinery, in my judgment, is the attitude which needs to be developed on all sides that disputes should be settled by direct negotiation. To such direct negotiation both sides should bring an attitude of patience and of reasonableness. If, after full and patient discussion, a dispute cannot be solved, then I would ask that recourse be had to voluntary arbitration avoiding both a trial of strength and too much dependence on official machinery. We have recently amended the Industrial Disputes Act to help settlement by arbitration. The new Section 10(A) of the Act provides that if the parties agree, they may, by written agreement, refer a dispute to an arbitrator and the award of the arbitrator would then be legally binding. I hope this procedure will be developed to the fullest extent and I myself would be prepared to assist by making available to both parties names of panels of arbitrators who would be readily available and from whom choice could be made by the parties without too much fuss or friction.

MOTION ON ADDRESS BY THE PRESIDENT—contd.

Mr. Speaker: The House will resume further consideration of the following motion moved by Shri Thirumal Rao and seconded by Shri M. P. Mishra on the 14th May, 1957, namely:

> "That the Members of Lok Sabha assembled in this Session are deeply grateful to the President for the Address which he has been pleased to deliver to both the Houses of Parliament assembled together on the 13th May, 1957."

We have spent two days over this and the whole of today will be set apart. I understand the hon. Prime Minister wishes to reply to the debate and he will do so tomorrow.

The Prime Minister and Minister of External Affairs (Shri Jawaharlal Nehru): I shall not be here tomorrow and so the hon. Home Minister will reply. But, if you wish, I can speak now.

Mr. Speaker: I have no objection. I was informed by the hon. Minister of Parliamentary Affairs that the Prime Minister would reply to this debate.

Shri Jawaharlal Nehru: He has misunderstood.

Shri Goray (Poona): Yesterday, while moving my amendments, by

oversight, I failed to mention the number of an amendment. Will you kindly allow me to move it now?

Mr. Speaker: It will be treated as moved.

Shri Goray: I beg to move:

That at the end of the motion, the following be added, namely:

"but regret that no reference to Goa has been made in the Address."

Shri Supakar (Sambalpur): May I know whether there will bo any further discussion after the Prime Minister's reply or whether it will be over?

Mr. Speaker: No. The hon. Prime Minister is only intervening and the discussion will go on for the whole of this day.

श्री जवाहरलाल नेहरू : अध्यक्ष महोदय,..

Some hon. Members: In English.

Shri Jawaharlal Nehru: If the House so wishes I shall add something in English also. I am not making any novel declaration; anyhow, if you, Sir, will permit me I shall speak a few words later in English.

इस बहस में, जो दो दिन से यहां हो रही है, बहुत सारे पुराने महारथी—और कुछ नए भी—बोले हैं, और मुझे खुशी हुई यह देख कर और सुन कर कि तरह तरह के विचार और ख्यालात पेश किए गए। आचार्य कृपालानी जी ने हस्बे-मामूल चारों तरफ़ तीर कमान चलाए। हमारे दोस्त, ब्रजेश्वर प्रसाद जी, ने अपने पुराने बम के गोले ज़रा इधर उधर फेंके। और हमारे विरोधी दल के एक नए नेता जी बोले, उनके हथियार मुझे ज़रा कुछ बाज़ारू मालूम हुए। मालूम होता था कि अभी तक इलैक्शन की हवा उन के दिमाग़ से कुछ पूरी तौर से नहीं हटी है और उन का विचार मालूम होता था कि यह लोक-सभा भी कोई इलैक्शन की मीटिंग है। एक और सज्जन आए हैं हमारी सभा में, जो कि हमें पुराने ज़माने में ले गए—एक राजा साहब, जो उस पार तशरीफ़ रखते हैं—और वह पुराने [illegible]

महसूस नहीं किया है कि हिन्दुस्तान आज़ाद हो गया है। बल्कि उन्होंने यहां तक कहा कि हिन्दुस्तान आज़ाद नहीं है और वह एक टूल है अंगरेज़ों का, अंगरेज़ी हकूमत का। अब ऐसे ख्यालात की निस्बत मेरा कुछ कहना ज़रा दुश्वार है, क्योंकि जो दिमाग पुरानी दलदल में इतना फंसा हुआ है, उस को वहां से निकालना मेरी कुव्वत से बाहर है। हमें आजकल की दुनिया को देखना है, न कि पुराने सबक रटना है और पुराने नारे दोहराना है। आज का ज़माना नया है—हिन्दुस्तान में भी और उस के बाहर भी। जो दुनिया आज से बीस, तीस या चालीस साल पहले थी, वह खत्म हो गई है। यह इतिहास में लिखा है, जो पढ़ना चाहें, वे उस को पढ़ें। इस लोक-सभा का काम है—ज़िम्मेदारी है—हिन्दुस्तान की आज-कल की हुकूमत और कल के हिन्दुस्तान का बनाना और इन्तज़ाम करना।

हमारे राष्ट्रपति के भाषण में चन्द बातों का ज़िक्र है। लोग शिकायत करते हैं कि उस में बाज़ बातों का ज़िक्र नहीं है, मसलन गोआ का ज़िक्र नहीं है, या किसी और मसले का ज़िक्र नहीं है। यह सही है और यह सही एतराज़ है, लेकिन उसी के साथ राष्ट्रपति का भाषण कोई सवालों की एक फ़ेहरिस्त नहीं होता है। आप ने देखा कि उस में खाने-पीने की चीज़ों के मुताल्लिक, गल्ले के सिलसिले में खास तौर से ध्यान दिलाया गया है—और शायद वह भाषण का सब से बड़ा हिस्सा है—, क्योंकि वह हमारे लिए एक अहम सवाल है। इन दो दिनों में जितने लोग यहां बोले हैं, उन का भी ध्यान इधर काफ़ी गया है, क्योंकि वह एक बुनियादी सवाल है। राष्ट्रपति जी ने भी उस के बारे में कहा है और वाकयात रखे हैं।

आचार्य कृपालानी जी ने कहा कि राष्ट्रपति का भाषण बहुत ज़ाब्ते का है। यह तो सही बात है कि वह ज़ाब्ते का है और मेरा ख्याल था कि राष्ट्रपति का भाषण ज़ाब्ते का होना वाजिब। जैसे यहां के कोई सदस्य—या मैं—

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

कभी इधर उधर बहक जाय, यह मुनासिब नहीं है कि राष्ट्रपति भी उस तरह बहकें। लोक-सभा यह भी जानती है कि राष्ट्रपति का भाषण कोई उन का जाती नहीं होता है, हालांकि वह उनके शुभ मुख से कहा जाता है। वह गवर्नमेंट की तरफ़ से तैयार होता है।

एक बात और हुई, जिससे मुझे कुछ तकलीफ़ हुई। श्री डांगे ने राष्ट्रपति के भाषण के बारे में कहा कि वह कुछ प्रान्तीयता में फंस गए। पैरोकियल हो गए हैं इसलिए कि उन्होंने बिहार तथा उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों का जिक्र किया है और बाकी हिन्दुस्तान को वह भूल गए हैं। मैं समझता हूं कि यह जो बात उन्होंने कही है, एक नामुनासिब बात कही है और महज़ नामुनासिब ही नहीं बल्कि वाकात से भी दूर की यह बात है। जो बात राष्ट्रपति जी के भाषण में कही गई है वह सीधी सी बात है और वह यह है कि इन दो जगहों में नुकसान ज्यादा हुआ है और इनमें कोई सन्देह भी नहीं है कि हुआ भी है। इसका यह मतलब नहीं है कि हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्सों में, अक्सर हिस्सों में दिक्कतें नहीं हैं। वे तो हैं ही। तो सब से अव्वल सवाल जो इस वक्त हमारे सामने है वह गल्ले वगैरह की पैदावार का है और लोगों को गल्ला पहुंचाने का है। मैं इस बारे में अधिक नहीं कहना चाहता क्योंकि मेरे साथी जो कि फूड एंड एग्रिकलचर मिनिस्टर हैं, वह आप से काफ़ी कुछ इस सम्बन्ध में कहेंगे। लेकिन एक बात जाहिर है जोकि राष्ट्रपति जी के भाषण से भी जाहिर है कि यह सवाल बहुत अहमियत रखता है। इस बात की अहमियत केवल इस वक्त के लिए नहीं है—वह तो है ही—लेकिन आइंदा के लिए भी यह बहुत बड़ी अहमियत रखता है। हमारी आइंदा की तरक्की का दारोमदार इसी पर निर्भर करता है कि हम खेती के जरिये हिन्दुस्तान में क्या पैदा करते हैं और कितना पैदा करते हैं। तो जहां तक इस सवाल की अहमियत का सम्बन्ध है, उसकी अहमियत में कोई शक वाली बात नहीं है। अब क्यों ये दिक्कतें पेश आईं इसका जवाब मैं यकायक नहीं दे सकता। मैं इस से इन्कार नहीं करता कि कहीं किसी की लापरवाही नहीं हुई है या गलती नहीं हुई है, हो सकता है कि हुई हो। लेकिन यह सवाल ज्यादातर हमारा ही नहीं है। इधर उधर की हकूमतों का भी है। लेकिन एक बात की तरफ मैं आपका और ध्यान दिलाना चाहता हूं। हिन्दुस्तान अकेला मुल्क ही नहीं है जो स वक्त इस साल—पहले सालों को छोड़ दीजिये उस वक्त भी दिक्कतें आई होंगी—इस दिक्कत में पड़ा है। हमारा पड़ौसी मुल्क चीन है। वह एक बहुत बड़ा मुल्क है और यकीनन वहां का इंतिज़ाम बहुत अच्छा है। वह भी काफ़ी परेशानी में पड़ा हुआ है इसी सवाल के बारे में और इसी वक्त। हमारे विरोधी दल के भाई यह तो नहीं कहेंगे कि वहां इंतिज़ाम में कोई खलल है, वहां का इंतिज़ाम तो बहुत ही माकूल है। लेकिन वह भी इसी मामले में इसी परेशानी में फंसा हुआ है क्योंकि ये बातें पूरे तौर से काबू में नहीं है। माना हम से कोई गलती हुई हो, हमें अपने आप को सम्भालना चाहिए और मैं पसन्द करूंगा कि यहां के माननीय सदस्य हमें बतायें कि क्या गलती हुई और क्या नहीं हुई। हम उन से मशिवरा करें और उनके मशिवरे से जहां सम्भल सकते हैं सम्भलें। लेकिन यह मोटी बातें समझने की है कि यह बात ऐसी नहीं है कि सोलहों आने काबू में है इस वक्त मैं उम्मीद करता हूं कि आइंदा होती जाएगी। चीन भी एक ऐसा ही मुल्क है जिस का दारोमदार बहुत कुछ खेती पर है। खेती की पैदावार का दारोमदार बारिश होने पर या कोई दूसरी मुसीबत न होने पर होता है। यह बात हो सकती है कि हम अपनी नहरों को बढ़ायें और इस तरह से इसको काबू में लायें। हम तजारत को बढ़ा कर उसको काबू में ला सकते हैं और हमें चाहिए कि हम उन्हें करें। लेकिन कोई जादू मेरे पास नहीं है जिस से यह सब सवाल हल हो जाए। आप जानते ही हैं कि

पीछे बिहार में मुसीबत आई, दिल्ली के पास आई और यहां की सारी फसल की फसल खराब हो गई इन ओलों के गिरने से । मैं नहीं चाहता कि मैं किसी चीज पर परदा डालूं । कोई अगर गलती हुई है या गफलत हुई है तो उस पर हमें गौर करना चाहिए और आपका पूरा हक है कि हमें आप उस गलती को बतायें और हमारा यह फर्ज है कि हम उससे फायदा उठायें । आखिर जो काम हमारे सामने है वह किसी दल विशेष का तो नहीं है और न ही विरोधी दल वालों का है । हमें सब को हिन्दुस्तान के बड़े सवालों को हल करना है और उसके लिए मैं आप से दरख्वास्त करूंगा, प्रार्थना करूंगा, कि आप टीका टिप्पणी तो अवश्य करें लेकिन उन सवालों को हल करने के लिए हम से मिल कर कोशिश करें ।

मैंने आप के सामने चीन की मिसाल दी है । मैं और मिसालें भी आपको दे सकता हूं जहां पर इसी मामले की वजह से और पैदावार कम होने की वजह से बड़ी मुसीबत पेश आई है । पूर्वी यूरोप के देश हैं, साम्यवादी देश हैं, काफी मुसीबत में हैं और पूरे तौर से कोशिश कर रहे हैं इसमें से निकलने की लेकिन फंसे हैं और बुरे फंसे हैं । पिछले वर्ष और अब हल्के हल्के उसको समाप्त करने की कोशिश होती है । आप को सुन कर आश्चर्य होगा कि पूर्वीय यूरोप के देशों में एक बड़े साम्यवादी देश में जब ७, ८ महीने या साल भर हुए मुसीबत आई तो वहां उनको सलाह दी गई और उन के बड़े आदमियों ने अर्थ शास्त्र के जो आचार्य हैं, उन्होंने सलाह दी कि तुम हिन्दुस्तान की नकल करो, तुम हिन्दुस्तान की पंचवर्षीय योजना को देखो कि वह क्या कर रहा है । इस के कहने से मेरा मतलब यह नहीं है कि मैं कोई जवाब दे रहा हूं उन गलतियों का जो कि हम से हुई हों । मैं तो आप को वह तस्वीर दिखा रहा हूं, अब आप उस तस्वीर की एक एक बात को पकड़ लें और नुक्ताचीनी करें, वह तो ठीक है लेकिन हमें जरा पूरी तस्वीर को भी देखना होता है । आखिर में हिन्दुस्तान के सामने और एशिया के जो और मुल्क हैं उन के सामने क्या सवाल है ? उन सब के सामने एक जबर्दस्त सवाल है कि मुल्क जो कि एक गरीबी के दलदल में फंसा हुआ है उस को उस दलदल में से निकालना है । अब एक मुल्क जिसमें कि बेशुमार आदमी रहते हों, कोई जरिया नहीं है और मुझे इल्म नहीं है कि हिन्दुस्तान में या कहीं और यह बातें जल्दी से तेजी से या जादू से हो जायं । कितने ही आप क्रान्तिकारी तरीके करें, फिर भी समय लगता है क्योंकि आखिर में गरीबी के दलदल से बाहर हम तभी निकल सकते हैं जब कि देश में दौलत पैदा हो ।

मेरे एक विरोधी पक्ष के भाई ने कहा कि समाजवाद महज कुछ नारों या बयानों से आने वाला नहीं है । मैं उन से पूरा इत्तिफाक करता हूं कि समाजवाद महज नारों या बयानों का नहीं है और मैं चाहता हूं कि वह भी इस बात को याद रक्खें कि नहीं है । हमें तो ऐसी एक बड़ी इमारत को नीचे से बनाना है, करोड़ों घरों से बनाना है और उठाना है, दिमागों को बनाना है और अपने समाज के संगठन को बदलना है और दूसरी हजारों बातें करनी हैं । ज्यों ज्यों हमारे देश में ज्यादा धन धान्य पैदा करने की शक्ति आती जाय, उस से हम लाभ उठायें और उस का फिर ठीक से बंटवारा हो । वह हमारे भाई बंटवारा कर के समाजवाद को लाना चाहते हैं लेकिन यह बंटवारा किस चीज का किया जाये ? मालूम नहीं किस चीज का वह बंटवारा करना चाहते हैं ? क्या वह देश की गरीबी का बंटवारा कर के यहां पर समाजवाद लायेंगे ?

उन भाई ने हिन्दुस्तान की खराब हालत दिखाने के लिए बहलाया कि यहां पर आये दिन खोंमचे वाले, मूंगफली वाले और रिक्शा-वाले बढ़ते जाते हैं । अब यह खोंमचे वालों का बढ़ना या रिक्शेवालों का बढ़ना, इस से यह नतीजा निकालना कि हिन्दुस्तान की कैसी खराब हालत है, मैं तो समझ नहीं सका, उस की तरफ कोई नई बात हो तो हो लेकिन यहां तो

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

यह खोंमचे वाले और रिक्शेवाले बाइज्जत लोग हैं ।

मैं चाहता हूं कि आप इन सवालों को जो चाहे वे हिन्दुस्तान के अन्दर के हों या हिन्दुस्तान के बाहर के हों, उन को एक पूरी तस्वीर को सामने रख कर देखने की कोशिश करें, फिर अलग अलग देखें । मैं इस से इंकार नहीं करता कि हजारों गलतियां हुई हैं और गलतियों और खराबियों से सारा हमारा मुल्क भरा पड़ा है । मैं इस मौके पर खुराक और खाने की बाबत ज्यादा नहीं कहना चाहता लेकिन मैं उसकी अहमियत को पूरी तौर से महसूस करता हूं और हमारे राष्ट्रपति महोदय ने भी उसको बहुत ज्यादा अहमियत दी है । उस सिलसिले में एक दिक्कत अक्सर हमारे सामने पेश आती है और वह दिक्कत यह है कि हमारे देश में बहुत सारे प्रदेश हैं और प्रदेशों की परस्पर नीति में कुछ न कुछ फ़र्क रहता है और वह एक जैसी नहीं होती और जिसकी कि वजह से दिक्कत पैदा हो जाती है । हमें कोशिश करनी चाहिए कि प्लानिंग कमिशन के द्वारा और अन्य ज़रियों से हम इस सवाल के ऊपर एक नीति बना कर चलें ।

एक बात मैं और कह दूं और मुझे खुद इस बात की शिकायत और रंज है कि जो हम ने इस सम्बन्ध में नीति बनाई हुई है उस पर प्रदेशों में पूरी तौर से अमल नहीं हुआ है और अगर कोई इस चीज़ की शिकायत करे तो मैं उससे सहमत हूं । आज हमारे देखने की ज़रूरत यह है कि तेज़ी से उस पर अमल किया जाय और मुझे ठीक से याद नहीं शायद मेरे साथी ने उस बारे में और ज्यादा जांच करने के लिये ज़िक्र भी किया है । हमारा इरादा है कि हम और तरीके निकालें और पूरी तौर से मालूम हो कि क्या पैदा होता है, और क्यों नहीं वहां अधिक पैदा हुआ जहां कि हम उम्मीद करते थे कि ज्यादा पैदा होगा ? अब हमारे पास इस बात के करने के ज़रिये भी बढ़ गए हैं, यानी स्टैटिस्टिकल ज़रिये । पहले भी कुछ थे, पटवारियों के बयानों पर काम चला करता था उस पर क्या भरोसा हो सके ? और काफी दिक्कतें थीं । अब मालूम होता जाता है ठीक से, तो उस से मदद मिलेगी ।

आप इस बात को छोड़ कर और जो सवाल हमारे सामने हैं उन पर आएं । आप का दिमाग गालिबन किसी कदर इस समय कुछ उस से भरा होगा जो कल शाम को आप ने बजट पर स्पीच सुनी । यह तो मेरे बजट पर कुछ कहने का समय नहीं है । बहुत मौक़े आएंगे आप के विचार करने के, हमारे विचार करने के, एक दूसरे से मिलकर करने के, लेकिन मैं ने उस का ज़िक्र इस लिए किया कि आप ग़ौर करें कि मसला देश के सामने क्या है, क्यों हमें इस बात की ज़रूरत हो रही है कि हम ऐसे कदम उठाएं, जो कि काफी गम्भीर हैं, काफी मुश्किल हैं, लेकिन उठाएं । क्यों उठाएं ? इस लिए कि या तो हम इस बड़े काम को, जो हम ने उठाया है, जिस को आप पांच बरस योजना कहें, या हिन्दुस्तान को आगे बढ़ाना कहें, जो कुछ कहें, पूरा करें, या हम वहीं के वहीं रह जाएं, उसे गिरने दें और उस के साथ देश को गिरने दें । हम मंझधार में हैं, हम हिम्मत कर के दरिया में कूदें, अब बीच में कोई ज़रिया नहीं है, वहीं टो रह जाएं, या तो ज़ोर लगा कर आप को उस पार पहुंचना है या गोता खा जाना है वही । तो बजट के माने क्या हैं, ऐसे बजट के ? वह है हमारा इरादा, हमारा तहैया, हमारा पक्का यकीन कि हम उस पार पहुंचेंगे, और ज़ोरों से पहुंचेंगे, चाहे कितनी तकलीफ उठानी पड़े ।

आप खुद विचार कर सकते हैं कि किसी गवर्नमेंट को तो अच्छा नहीं लगता है कि लोगों पर बोझा बढ़ाये । आम तौर से गवर्नमेंट झिझकती हैं इस से । हम ने किया तो कोई खुशी से नहीं, हम तजवीज पेश करते हैं आप के गौर करने को तो खुशी से नहीं बल्कि

इस मजबूरी से और यकीन से कि जब तक इस में काफी जोरों से क़दम नहीं उठाये जायेंगे, हम न इधर के रहेंगे, न उधर के रहेंगे। आप कदम उठायेंगे, कुछ हेर फेर होंगे, आप के विचार करने की बात है। लेकिन मोटी बात यह है कि यह बातें हो नहीं सकती हैं कि हम आज कल की हालत को चलने दें, या फर्ज कीजिये, कहा जाता है, और ठीक कहा जाता है, मुझे इस में एतराज नहीं है, कि किसानों की तन्ख्वाहें बढ़ें, नया पे कमिशन लायें, यह सब बातें कही जाती हैं। बहुत माकूल बहस हो सकती है इसमें, मैं तो नहीं कहता कि नहीं हो सकती है, बहुत बहस हो सकती है, खास कर हमारे आज तबके के लोग हैं, काम करते हैं, उन की आमदनी बढ़े। कौन कह सकता है कि न बढ़े। लेकिन आप इस वक्त कोई कदम उठायें जिस से वक्ती फायदा पहुंचाने की कोशिश में आप बुनियाद निकाल दें, सारी हमारी पांच बरस योजना की, तो वह एक अक्ल की बात तो नहीं है। आप खुद समझ सकते हैं। हां, जहां जहां जरूरी हो मदद करने की, मदद करनी चाहिये, तन्ख्वाह बढ़ानी चाहिये, लेकिन कोई आम ढंग बना दें, तो जो मुल्क इस तरह से बढ़ने की कोशिश करता है, बल्कि जमीन से अपने को उठा रहा है, अपनी शक्ति से, आप उस की पीठ पर और बोझा लाद दें तो उस का उठना दुश्वार हो जायेगा। यह एक पेचीदा सवाल है, आप इस पर विचार करेंगे। लेकिन जो कुछ मैं आप से बहुत अदब के साथ तजवीज करना चाहता हूं, वह यह कि आप जरा इस पूरी तस्वीर को देखें और खाली इस मुल्क को न देखें बल्कि और मुल्क जो कम व बेश इस हालत में हैं और कोशिश कर रहे हैं आगे बढ़ने की। अजीब मामला है। आप देखेंगे कि जो बड़े बड़े सवाल हमारे यहां हमें परेशान कर रहे हैं वही सवाल उन मुल्कों को कर रहे हैं, हालांकि उन की परिस्थिति दूसरी है, हालांकि उनका सामाजिक संगठन दूसरा है। सवाल वही है अगर उसी ढंग का मुल्क है जैसे चीन या हिन्दुस्तान है या बाज योरोप तक के मुल्क हैं। तो खाली नुक्ताचीनी करने से तो कोई फायदा नहीं है। हमारी यह ख्वाहिश है और विरोधी दल की भी यही ख्वाहिश है कि हिन्दुस्तान की तरक्की हो। हिन्दुस्तान की तरक्की के मामले में आप बखुशी बतलाइये कि कहां कहां हमसे गलती हुई। और मैं एक बात सब माननीय सदस्यों से अर्ज करना चाहता हूं कि यह मेरी ख्वाहिश है कि अलावा उस काम के कि जो आप यहां लोक सभा में करते हैं, जैसे कि आप यहां सवाल करते हैं या बातों को तरफ ध्यान दिलाते हैं, अगर आपको कोई शिकायत किसी मिनिस्ट्री से हो तो आप अपनी शिकायत उस मिनिस्टर के पास सीधे ले जायें। इस के लिये आपकी दावत है। आप अपनी शिकायतें लिखकर या जबानी कहें ताकि या तो कुछ बाकयात आपके सामने रखे जायें या अगर आपकी बात सही हो तो उसको हम करें। अरज यह है कि हम चाहते हैं कि इस तरह का रिश्ता रहे। इस तरह के सहयोग से बहुत कुछ काम हो सकता है। हम यह नहीं कहते कि हर बात जो कही जायेगी हो सकेगी, लेकिन एक तरफ जहां हम एक दूसरे का मुकाबला करें, जैसा कि पार्लियामेंट का दस्तूर है, तो दूसरी तरफ हम उन बड़े कामों में जिनमें हम सहमत हैं एक दूसरे की मदद भी करें, यह भी पार्लियामेंट का दस्तूर है। और हिन्दुस्तान को आगे बढ़ाने में कौन सहमत नहीं है।

आचार्य कृपालानी जी ने कहा कि इस दफा हमारे राष्ट्रपति के भाषण में देश की हालत की तरफ ज्यादा तवज्जह है और दुनिया की हालत पर उसके मुकाबले कम। यह बात सही है, बल्कि, जैसा मैं ने कहा

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सबसे ज्यादा देश की हालत पर तवज्जह है, खाने पीने के मामले पर, क्योंकि वह एक सवाल हमारे सामने है। जाहिर है कि हमारा और आपका और लोकसभा का काम है कि देश की हालत पर तवज्जह करें। यहां के लिये तो आप कानून बनाते हैं, आप दूसरे मुल्कों के लिए तो कानून नहीं बनाते। और विदेश के लिहाज से भी जितनी ताकत हमारे देश में है उतना ही हम असर पैदा कर सकते हैं। यह मोटी बात है। विदेश की बात हमारे सामने आती ही है। मैं ने पहले ही अर्ज किया है कि हमरी गवर्नमेंट की यह ख्वाहिश नहीं है कि हम विदेशी सवालों में फंसें लेकिन एक वाकयात की मजबूरी होती है और आज कल की दुनिया की मजबूरी है। आप साहिबान को इस बात का खयाल है, आप सब कभी कभी इसका जिक्र भी करते हैं। लेकिन चूंकि मेरा बिलफेल इस मिनिस्ट्री से ताल्लुक है इसलिये आजकल की दुनिया की हालत की वजह से मेरे ऊपर एक बोझा हो जाता है। यानी मुझे यह खयाल रहता है कि कोई बात दुनिया में ऐसी न हो जिससे हमारे घर का काम बन्द हो जाये, हमारे घर के काम में अटकाव हो जाये, और दुनिया की लपेट में हम भी आ जायें। हमारे सामने हाइड्रोजन बम का खतरा है। इस मामले की हमारी महज दिमागी पकड़ नही बल्कि गहरी पकड़ होनी चाहिये ताकि हम महसूस करें कि आजकल दुनिया तबाही के कितनी करीब है। अगर इत्तिफाक से जरा सा कोई मौका हो जाये तो वह मालूम दुनिया आज कहां से कहां पहुंच जाये। जाहिर है कि हमारी इसमें दिलचस्पी है। जाहिर है कि हमारी जो कुछ ताकत है उसे हमें अमन और सुलह की तरफ डालना है। मैं नहीं कहता, और अगर कोई साहब यह समझते हैं तो वह गलत समझते हैं कि हमारी बड़ी जबरदस्त ताकत है। हमारी थोड़ी ताकत है। हमारी आवाज छोटी है। हम गुल नहीं मचा सकते, हम किसी पर दबाव नहीं डाल सकते। फिर भी जो कुछ तोला माशा, हमारी ताकत है उसको हमें अमन की तरफ डालना है और इसीलिये हमने निश्चय किया है और इस नीति पर चल रहे है कि आजकल की दुनिया के जो बड़े बड़े हथियारबन्द गिरोह हैं उनसे दोस्ती रखें, लेकिन लड़ाई झगड़े के मामले में उनसे कोई जाब्ते का ताल्लुक न रखें, जिसे मिलिटरी एलायंस या फौजी सम्बन्ध कहा जाता है। इस तरह के सम्बन्धों से हम अलग रहना चाहते हैं। यही हमारी नीति रही है और मेरा खयाल है कि लोक सभा ने इसे बार बार स्वीकार किया है। अब विरोधी दल के जो साहबान इस नीति को पसन्द नहीं करते या कहते हैं कि हमें कुछ और करना चाहिये, वह साफ साफ बतायें किस ढंग की बात करना चाहते हैं। मै यह जानना चाहता हूं। वह कह सकते हैं कि हमें दुनिया के एक बड़े दल में शरीक हो जाना चाहिये और फिर वे हमारा साथ देंगे। लोग कहते है कि काश्मीर के मामले में सिक्योरिटी कौंसिल में आप का किस ने साथ दिया, क्या आप की नीति है। मैं यह मानता हूं, हालांकि सिक्योरिटी कौंसिल कोई

दुनिया का नक्शा नहीं है, नमूना नहीं है। लेकिन उससे नतीजा आप क्या निकालते हैं। क्या आप यह चाहते हैं कि अपने पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान की तरह हम भी एक रथ के पीछे बन्ध जायें और जिधर वह रथ जाय, हम भी जायें? यह मोटी बात है और इस को साफ तौर पर समझना चाहिये कि अगर हम ने इन दोनों बातों को नहीं करना है—जैसा कि मैं समझता हूं कि नहीं करना है —तो उस के नतीजों को हमें बर्दाश्त करना है और मेरा ख्याल है कि उस के नतीजे भी आखिर में अच्छे होंगे—महज एक उसूली हवा के लिये नहीं, बल्कि अमली नुकता-ए-नजर से। अगर हमारी यह बुनियादी नीति आप को पसन्द है, जैसा कि आप ने बार बार कहा है, तो उस का नतीजा यह होता है कि वक्त पर हमें नुक्सान होता है और जो मुल्क बड़े बड़े सुलहनामों में बंधे हुये हैं, वे हमसे नाराज होते हैं और वक्त पर हमारे खिलाफ़ राय देते हैं। लेकिन मेरी राय बहुत ही मजबूत है कि जिस नीति पर हम चले हैं, उस के अलावा हिन्दुस्तान के लिये और कोई रास्ता नहीं है। मैं इतना और कहूंगा कि उस नीति पर चलने से हम ने अपना लाभ किया, अपना फ़ायदा किया, हमारी कुछ इज्जत भी बढ़ी और दुनिया में अमन कायम रखने में कुछ न कुछ मदद भी की। तीन तो जरूर—और शायद ज्यादा—मौके हुये हैं, जब कि हिन्दुस्तान के थोड़े से वजन और हल्की सी आवाज से भी दुनिया के इतिहास में, यानी लड़ाई और अमन के सिलसिले में, एक फ़र्क पड़ गया। लेकिन वह हो, या न हो, हमें तो अपना कर्तव्य—अपना फ़र्ज—अदा करना है, कोशिश करनी है कि हम इस तरह से अपने देश को चलायें कि एक बाजारू मोल-तोल में हम न पड़ें—यानी हम तुम्हें यह देते हैं, तुम हमारा साथ दो, इस तरह की बातों में न पड़ें। इस तरह से कोई शानदार मुल्क आगे नहीं चल सकता है। मेरी फ़िक्र और कोशिश है कि हिन्दुस्तान जो भी बात करे, वह ऊंचे दर्जे की हो, शानदार हो, क्योंकि हम ने दूर तक देखना है और अपने मुल्क को दूर तक आगे ले जाना है।

चन्द साहबान ने कहा कि इस में गोआ का जिक्र क्यों नहीं है। श्री गोरे ने, जिन को गोआ का जाती तजुर्बा है, एक बात कही—और माकूल बात कही— कि आप गोआ की निस्बत साफ़ साफ़ क्यों नहीं कह देते कि आप की क्या नीति है। मेरा ख्याल था कि हम ने साफ़ साफ़ कह दिया है कि इस बारे में हमारी बुनियादी नीति क्या है। हम ने कहा है कि गोआ पर हम कोई फ़ौज नहीं दौड़ायेंगे, हम किसी हथियारबन्दी से गोआ को फ़तेह नहीं करेंगे। क्यों नहीं करेंगे, इस की वजूहात में मैं जाने के लिये तैयार हूं। इसलिये नहीं करेंगे कि दुनिया के सिलसिलों में हम ने अब तक जो नीति रखी है, यह उस के खिलाफ होगा। और उसूल को छोड़िये, हम इससे हजार पेचों में पड़ जायेंगे। दुनिया में जो थोड़ी बहुत जगह हमने बनाई है, वह खत्म हो जायगी। दुनिया के सवालों में थोड़ा बहुत जो हिस्सा हम लेते हैं, उन में हम कमजोर पड़ जायेंगे। हम एक तरह के भिड़ के छत्ते में पड़ जायेंगे जिससे बचना मुश्किल हो जायगा। अलावा उसूली बातों के यह उसका प्रैक्टिकल कान्सीक्वेन्स होगा।

इस के अलावा यह कोई अजीब बात नहीं है, जो कि हिन्दुस्तान कर रहा है, और कोई और नहीं कर रहे हैं। मैंने पहले भी कहा है कि हूबहू ऐसा ही सवाल चीन में मैकाओ का सवाल है। वह भी पार्तुगीज का एक छोटा सा अड्डा है।

चीन एक महा शक्ति है, एक ताकतवर देश है इस में कोई शक नहीं कि जिस वक्त भी वह चाहे फ़ौज से उस को ले सकता है। क्यों

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

नहीं उन्होंने ऐसा किया ? इसलिये कि वे दूर-अन्देश हैं । वे दूर तक देखते हैं वे एक छोटे से वक्ती फ़ायदे के लिये एक जबर्दस्त नुक्सान नहीं उठाना चाहते ।

मैंने आप को दिखाया है कि हम उस वक्त जोश में आ कर एक बात करें और फिर एक मुसीबत में पड़ें, अपनी नीति को छोड़ दें, यह कोई समझ की बात नहीं है । मैंने बार बार कहा है कि यह जरूरी बात है कि गोआ को हिन्दुस्तान में शामिल होना है ।

इसको आपने स्वीकार किया है और हर हिन्दुस्तानी भी यही कहता है और मुझे कोई सन्देह नही है कि वह होगा लेकिन वक्त की बात जरूर है । हमें कोई भी काम जल्दबाज़ी में नहीं करना चाहिये और इस वजह से नहीं करना चाहिये कि हम में उत्साह है, हम में जोश है । इस तरह का काम करने का क्या नतीजा हो सकता है, इस पर विचार कर लिया जाना चाहिये । हम अगर फौज से वहां हमला नहीं करते तब हम क्या बड़ा फौजी हमला वहां होने दें या नहीं ? आप जानते हैं यह सवाल हुआ है । अगर बड़ा हमला वहां बगैर फौजों के होने दें तो इसका क्या नतीजा होगा । अगर उसका नतीजा यह हुआ कि फिर हमें मजबूर हो कर फौजें ले जानी पड़ीं तो वह गलत बात हो जाती है और सरीहन गलत बात होगी । अक्सर लोग जानते नहीं कि क्या उन्होंने कहा । पहले तो कहा था कि हम तो यह इस लिये कर रहे हैं कि आपको मजबूर करें फौजें लाने के लिये । तो अगर आप देखें तो आपको मालूम होगा कि फिर हम उसी पेंच में फंस जाते हैं । गोआ का एक तकलीफदेह सवाल है, हर वक्त सिर में दर्द लगाये रखता है, महज इसलिये नहीं कि वहां वाली पोर्चुगल की हकूमत को बदतमीज़ी की बातें होती हैं, गलत बातें होती हैं, ज्यादतियां होती हैं जो कि हिन्दुस्तान के खिलाफ जाती हैं और उसकी शान के खिलाफ जाती हैं—यह तो है ही—लेकिन वहां के लोगों के विचारों का खास तौर से जो उनकी परेशानी हैं, जो उनके ऊपर बोझा पड़ रहा है, दबाव पड़ रहा है, जुल्म हो रहे हैं, इन बातों से भी हमें तकलीफ होती है । मैं आपसे साफ कहूं कि मैं बड़े पच में पड़ा हूं । हमने जो कार्रवाई की, कुछ आर्थिक कार्रवाई की जिसको कि सैंकशंस कहते हैं उसका कुछ न कुछ असर तो पोर्चुगीज़ गवर्नमेंट पर पड़ा और यकीनन पड़ा और वह ठीक भी था लेकिन उसका असर वहां की आम जनता पर भी पड़ा, वे बेचारे परेशान हुये और शायद पोर्चुगीज़ गवर्नमेंट से भी ज्यादा परेशान हुये । तो मैं नहीं चाहता हूं कि उन बेचारे लोगों को परेशान किया जाय । वे यों भी पोर्चुगल के नीचे परेशान कम नहीं हैं । लेकिन हमारी कार्रवाई से जब परेशानी बढ़ती है तो यह बात विचारतलब हो जाती है । तो हम क्या करे और क्या न करें, ये सब पेंच हैं । मैंने एक बार कहा था कि मैं चाहता हूं कि दो तीन मोटी मोटी जो बातें हैं उनको समझ लिया जाये और उनको ध्यान में रखते हुये हम कोई फौजी कार्रवाई नहीं करना चाहते । हमारे ऐसा करने से क्या मालूम दुनिया में क्या उसकी उलट पलट हो । यह छोटी सी बात नहीं है । तब हम क्या करना चाहते हैं । हम वही करना चाहते हैं जो हमारे सिद्धान्त से मिलती जुलती बात है । यह जो चीज़ है यह यकीनन आखिर में गोआ के लोगों की है— हमारी भी है मैं इससे इन्कार नहीं करता—लेकिन अव्वल तो गोआ के लोगों की है । गोआ के लोग चाहे गोआ में रहते हों या बाहर उनकी है । एक लाख के करीब गोआनी लोग बम्बई

में रहते हैं और मुझे अफसोस से कहना पड़ता है कि वे आपस में ज्यादातर लड़ा करते हैं और इस उम्मीद में रहते हैं कि बाहर से आकर गवर्नमेंट आफ इंडिया उनकी मदद करती जाये। बिलकुल अपनी टांगों पर खड़े होने की भी उन्होंने कोशिश नहीं की, इस बात का मुझे रंज है। मैं तो चाहता हूं कि इस हफ्ते या इसी महीने विरोधी दल के जो सदस्य हैं और इस तरफ के जो सदस्य हैं उनसे मैं पूछूं और वे मुझे बतायें और हम लोग मिल कर इस मामले में बात करें और सोचें कि हमें इस मामले में क्या करना चाहिये। अगर वे मानें तो हम अवश्य इस मश्विरे में शरीक होंगे। जो माननीय सदस्य इस मसले में दिलचस्पी रखते हैं, मैं चाहता हूं वे भी इसमें शरीक हों और कुछ रोशनी डालें।

गोआ के बारे में ही मैं आपको एक बात और याद दिलाना चाहता हूं। पौर्चुगीज़ गवर्नमेंट का इंटरनेशनल कोर्ट आफ जस्टिस में एक मुकदमा है जिसे उसने दायर किया है और आप जानते ही है कि वह किस के बारे में है। असल में वह नागरहवेली के बारे में है। यह सवाल भी खाली उसका नहीं रहता, इसमें भी पेंच आ जाते हैं। इसके बारे में हमारा जो जवाब है वह अदालत में पेश कर दिया गया है। पौर्चुगल ने हमारे जवाब का जवाब देने के लिये वक्त मांगा है और यह झगड़ा महज इस बात पर है कि अदालत को इस सवाल पर विचार करने का हक हासिल है या नहीं। तो ये सब पेंच हैं जिनको मैं आपके सामने रखना चाहता था।

काश्मीर के बारे में बहुत कुछ बहस हो चुकी है और मैं यह मुनासिब नहीं समझता कि इसके बारे में अब कुछ कहूं। अभी डा० यारिंग यहां आये थे और उन्होंने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी है। गालिबन चन्द एक दिनों में या दो एक हफ्तों में —मैं नहीं जानता —सिक्योरिटी काउंसिल में बहस होगी। इस वास्ते मैं ज्यादा उस पर कहना इस वक्त मुनासिब नहीं समझता हूं।

Mr. Speaker, Sir, I am always glad when this House discusses these broad questions of policy, whether domestic or international. We want as much criticism as possible on governmental policies. We want hon. Members, whether on this side or on the other side of the House, to help us with their views, criticisms, etc. Because, in spite of the fact that there are various parties opposing each other—there is the government party, there are opposition parties, and naturally we have occasion to oppose each other in this House—I have always in mind that this Parliament has to function as a whole for the good of India; and while we may criticize each other, as we should when that is necessary, we have always to remember that we are engaged in a common undertaking. So I welcome criticism. Sometimes, of course, when the criticism is, to my thinking, irrelevant or far fetched, then perhaps my welcome is not quite so warm.

It is a fact that we are facing, in India and the world, problems of tremendous significance. It is a trite saying that we are passing through grave periods of transition, in the world or in India. It is often repeated. But I rather doubt that, although we repeat this very often, we quite realize the crucial nature of this period through which we are passing. These days, months and years that pass, whether in the international sphere or in our domestic sphere, are of the most vital importance. In the international sphere we have lived, during these past terrible years, almost on the edge of disaster and catastrophe. The fact that it has been avoided thus far need not make us complacent; we still live on it. It is an extraordinary state of affairs, what you read about daily in your newspapers—what is happening elsewhere, whether it is the hydrogen bomb, the test explosions, the piling

[Shri Jawaharlal Nehru]

up of nuclear and thermo-nuclear weapons. They are being spread out in other countries too; they are being given to other countries. It is a terrible prospect.

13 hrs.

We talk of disarmament, and sometimes one feels that the world is making some progress towards disarmament. And then we come back to the hub and realize not only that we remain where we were but we have perhaps gone back a little. Hon. Members opposite said that the fault lies with a certain group of nations, not with others. Now, it is not our function to find fault with any nation. We have to express our opinions—sometimes even though they might be disliked by some country—but we avoid finding fault with nations or quarrelling with nations. We want to be at peace with them. If our opinions differ, naturally we have to express them. But it is a somewhat extraordinary state of affairs: take this question of the building up of nuclear and thermo-nuclear weapons. Almost every intelligent person knows and says that if there is a war in which these weapons are employed, it may mean almost extinction of humanity or a large part of it. That being admitted, what is done to prevent it? They build up these very weapons and go on experimenting with them. So far as experimenting is concerned, it is admitted that there are known dangers with each experiment. The extent of danger is argued about. True. But, the fact that they are dangerous is admitted by every one. Whether we have passed the extreme danger point or not may be argued about. Then, there are the unknown dangers about which nobody knows. They are unknown dangers. Yet, this thing goes on. Most countries say that there are at present two major blocs in possession of a large number of these bombs and a third, namely, the United Kingdom which presumably, has some atomic bombs and in the course of experimenting with hydrogen bombs. I should like this House just not to consider this merely on the intellectual plane, important as that is, but just try to understand this picture of great countries, respected countries going ahead with their preparations for what can only end, if this thing continues in world disaster on a tremendous scale. I am not referring to the amount of money that is being spent or wasted over this tremendous armament race. I was told only yesterday that our Five Year Plan with our thousands of crores of rupees is just a few months expenditure on the military budget of a great country. Eighty days, I believe, was the figure Our Five Year Plan with all this development work and everything included in this country is 80 days military expenditure in peace time. In war, of course, it will be much more. Here is this world hungering for development. Asia, Africa, etc., and these vast sums of money being spent not on building up anything but on weapons of destructions. It is an extraordinary state of affairs.

There is another aspect. We see in the Middle East today a number of very odd developments taking place—last year all this has been happening:—first in connection with the Suez Canal, then intervention in Egypt, invasion of Egypt and other matters, then Jordan. Once I said in this House, I remember, though I used the word unthinkingly at that time, that the various changes in the Middle East have led to the creation of a temporary power vacuum there. I did not think then that my words would lead people to think that people should come from outside and try to fill the vacuum. Surely, if there is a so-called power vacuum, the only way to fill it is by the people of that country and not by the imposition of some external agency. I think, it is a very dangerous theory of nations, whatever nation it ploc of

I think it is a very dangerous theory of nations, whatever nation it might be, whether it belongs to one bloc or the other bloc of these great blocs. But, this idea of thinking that the world has to be in some way under their sphere of influence and they have to fill the vacuums which are created by the withdrawal of old colonial powers, obviously, so far as our thinking goes, is entirely opposed to our way of thinking. Apart from our thinking, I submit it is not a practical approach. It does not lead even to the results aimed at. It creates difficulties and fresh problems. If one person tries to fill the vacuum, others try to do so and a place which should develop peacefully becomes an arena of conflict as we see it happening. We cannot, I submit, afford to ignore the international scene because it affects our own development, Five Year Plan and everything.

Having said that, I come back to our real and main work. Our main work is the building up of our country and not interfering with other countries. Our main work has broadly been stated in the Five Year Plan. Hon. Members can, I am sure, criticise our Five Year Plan and give us ideas, where it is wrong, where it should change. It is not a rigid Plan. We decided even at the time of the framing of the Plan that it should be a flexible Plan. We have changed it since then; we may have to change it again. But, we do intend to continue with the basic framework of the Plan and the basic idea. Because, I do not think there is any other way out of it. If we give it up, then, we give up any major scheme of development in this country and we are not likely even to remain where we are. We will get submerged by the various forces, economic forces and other forces that our own activities have produced in the world. So that, we have to go ahead with this Five Year Plan.

Some hon. Members opposite may think that the Five Year Plan is not adequate or is weighted wrongly. That is a matter for discussion. The adequacy of it reflects on the adequacy of our resources. The House has some idea of the effort that this Government is making to find these resources from the Budget statement of the Finance Minister yesterday; that is, to say that we are going to do our utmost to go through with this Plan—minor things apart—major things in the Plan. Because, the whole future development of India depends on the success of that Plan. An hon. Member said, why not extend it to six or seven years. Minor matter may be extended or left out even. So far as the basis of the Plan is concerned, the House should remember that extension is not such an easy matter. Because, the more we extend it, the more difficult it becomes to deal with the situation. Suppose we delay, let us say, our iron and steel works, we delay production, we delay the growth of industry in this country, we delay every process that would help us to deal with the situation, and the situation meanwhile gets worse. It is not a question of delaying something by a year or two. We lose all the productive capacity of that year and thereby we permit the situation to worsen and become much more difficult to handle later. That is the problem. It is easy enough to say, stretch it out by a year or two. We may stretch out some relatively less important thing; but we cannot in regard to major things; we cannot in in regard to the machine-building plants. We have to build machines here. How long are we to depend on machines from outside? There are so many other things which we cannot stretch out; we cannot, above all, in regard to agriculture and agricultural produce, which is of the highest importance. Because, however important industry might be, industrial growth will depend on a stable agrarian economy, on a stable food position in the country. Therefore, agriculture will now and always be No. 1 however much stress we may lay on industry. Yet, we may lay stress on industry, heavy industry. Because if this country is to be industrialised, it cannot be industrialised without the growth of heavy industry

[Shri Jawaharlal Nehru]

here. That is a patent thing, and an obvious thing.

Now, building up heavy industry means a great burden. It means a burden which the country has to bear without recompense till that heavy industry begins to produce. For three, four, five or six or seven years, you spend hundreds of crores of rupees in building up a steel plant, a machine-building plant, with nothing coming out of it. Yes; after that, much comes out of it; after that, wealth flows from it. That is why we build it. But in these initial years, any country that has to go through this process, whether it is India or China or any other country of Asia or Europe, must necessarily go through that process. There is no way to escape it. You have to pay the price for industrialisation, for development. And then, you get back, of course, returns afterwards. And it is for us to determine whether we are prepared to pay that price or not.

In other countries which may be termed authoritarian, they have to pay the price too—do not imagine they do not—and sometimes a heavier price. Only, perhaps, they do it by a decree, and they can do it even without the consent of many people there, or too many people—I do not know. Anyway, we cannot do it that way. Whatever planning and whatever activity we may indulge in, we have to carry our people with us. We have, first of all, to have the goodwill of this House, of Parliament, secondly, the goodwill of all the State Assemblies and the State Governments, and finally, of our people right down to the panchayat level.

I have talked about heavy industry and other matters. And yet, I do think that, perhaps, the most important thing that is being done in India, whether from the point of view of food production, agriculture or from the point of view of small industry—not heavy industry—is the community development scheme which has spread now, as the President has said, to about 220,000 villages. I do not mean to say that these 220,000 villages are all up to the mark. But I do think, and I do say with some confidence, that the average level of this community development is high, remarkably high, considering that we started just a little over four and a half years ago.

This community scheme will, we hope, change, and is, to some extent, to our knowledge, changing, the face of rural India, changing the people of rural India, not only the face of rural India.

Acharya Kripalani said that India was a slum. It is very largely true a statement. Of course, it is a slum. A poverty-stricken nation is a slum. There is no doubt about it. But how do we get over this difficulty? How shall we convert rural India? Leave out the slums of Delhi, Calcutta and Bombay; how do we convert the face of rural India? No purely governmental affort or governmental expenditure can do it. It can only be done by the people of those villages *being organised and helped to do it* themselves, by getting that spirit in them to do it. I believe that spirit is coming in them. I have seen with my own eyes how villages are changing. It is not so dramatic a change, obviously. But, it is dramatic, if you compare it to what it was. And it is through these community development schemes, I think, that ultimately our agricultural production will really go up. It went up in those areas.

Shri Frank Anthony, I think, threw some doubt on statistics. I can quite understand that feeling. But I think I can say with some confidence that the statistics we are getting now through our sample surveys are fairly accurate and reliable. Of course, we are making them more and more accurate. And we propose, and we are, developing our statistical apparatus to get accurate statistics of every crop, as well as other matters, of course.

There is no doubt about it that in these community development areas, food production went up by 25 per cent., that is, in the First Five Year Plan, not in all the areas which are now under the community development scheme, because they have not had a chance yet. Now, 25 per cent., to my thinking, is a substantial increase. I think it should go up much further; that is a different matter. But if we can go up to 25 per cent. too, that is a fairly substantial increase. I shall leave the figure fixed at 28 per cent. for the next Five Year Plan, because we shall cover much more land. I think we can do it.

May I say that I agree with the criticism made by some Members that in a number of States, land reform legislation has been slow, much too slow? It should have been much faster, and I hope it will be speeded up.

Personally,—or rather, not personally; this is what the Planning Commission has laid down, and, I believe, this House has approved of—I do think that the way for progress in agriculture is through agricultural co-operatives, agrarian co-operatives. I do not believe in very large co-operatives. I think probably the best size would be a village co-operative. I do not mind if there are two in a village, because I want intimacy, people knowing each other, the personal factor—not the impersonal one.

Take even this matter of agrarian co-operatives. It can only be introduced, naturally, by consent, by the democratic method. We cannot force them down. But I do think that that is necessary in our country, where holdings are so small; we cannot take advantage of many modern methods, modern techniques with a holding of one acre or two acres. We do not want large holdings. We want to limit those holdings. The only way out, therefore, becomes the development of co-operatives in this field.

And yet, I am surprised that in spite of the Planning Commission having said so, in spite of this House having agreed to it repeatedly, yet doubts are raised, and people say, 'Oh, this kind of thing may be good enough for other countries, but is not suited to India'. I can understand someone like our friend Shri Mahendra Pratap saying that, because he lives in some distant vision of the past, where *raths* used to go about and work and so on and so forth. That one should challenge this fact surprises me. Agrarian co-operatives are necessary for the development of our peasantry, and our villages, and our production, and otherwise. I recognise that we cannot develop them by a decree; and we cannot develop them very rapidly, because we have to convince people, we have to bring them round, and we have to get their agreement. Maybe, we shall have to start in a relatively small way and as results come—and they are bound to—others will follow, because, fundamentally, I think, the Indian farmer, the Indian peasant, is a wise person. If we approach him rightly and explain things, I think he will accept this.

Now, there are so many things that we try to do. There were questions today about oil and other matters. Here is oil extraction going to take place, which, in the course of a few years—two years, three years, or four years, I do not know—would make a fairly considerable difference to us, because oil is vastly important. The mere fact of our non-dependence for oil on foreign countries would make a great difference, apart from the other benefits that will come to us.

I would beg, therefore, this House to consider these matters in this broad perspective, and to remember that we have undertaken this great burden, and we have to discharge it; we have to keep the promise we have made to our people and to ourselves, and to go ahead with it, even though this might involve carrying a heavy burden for some time. And I would

[Shri Jawaharlal Nehru]

beg of Members here to criticise anything to their hearts' content, but to approach every questions in a constructive spirit.

Acharya Kripalani mentioned something about corruption, and in this connection mentioned two cases connected with my Ministry namely the Ministry of External Affairs. The first was about money being borrowed for three consecutive years for the purchase of cars. It was very improper. But we do not lose any money thereby; if it is borrowed, it is paid back. But, nevertheless, it was a very improper thing. And other improper things—one or two were mentioned by him—also come out. That is what the Public Accounts Committee and other Committees are for, and we want the help of Members to deal with such instances. But I would beg of the House to remember that because a number of such instances comes up and is dealt with—and should be dealt with—we must not imagine that this kind of thing is prevalent everywhere, that everybody does it.

Let us take our foreign services. There are hundreds of officers serving abroad. If something bad happens, we take steps. Let us punish them. I do not say that everybody is above error or above doing wrong things. But I do know that a great number of them, these young men and some young women who are in our foreign service, are a fine lot of people.

Acharya Kripalani (Sitamarhi): May I interrupt for a moment? It is not that such things do not happen. They happen. But the unfortunate thing is that nothing is done about them and the persons who are responsible for those things occupy the same position or even better position.

Shri Jawaharlal Nehru: If the hon. Member tells me of a case where action has not been taken, I will look into it. But I think that whenever such things happen, steps are always taken and where it is proved, punishment awarded. It may of course be that in a particular case the hon. Member may think that the punishment ought to be heavier. That is a different matter. The difficulty is that our procedures are so complicated. Enquiries—departmental and otherwise—go on. Then there is reference to the Public Services Commission. It takes years really to get over these. Sometimes, in order to avoid this complicated procedure, we take some steps and award some punishment which is lighter but which is sudden. That is done. Otherwise, for the heavier punishment, we would have to wait for two or three years and it goes backwards and forwards.

This is a matter for this House to consider.

Shri S. L. Saksena (Maharajganj): Is there a proposal to simplify procedure?

Shri Jawaharlal Nehru: The matter has been considered. The House can consider it. I shall welcome if procedures are simplified.

Anyhow, as I was submitting, we are wide awake as far as we can be. We want the help of this House, we want the help of the Public Accounts Committee and other Committees to deal with these matters. But in dealing with these matters, the House should remember that we should not try to tar everybody with the same brush. We are being served, I think, faithfully, by large numbers of our public servants efficiently and honestly I think our public services can compare with the public services of any country. I do not say that everyone is good. But the general standard is a high one. Any one who knows about the public services of other countries will probably agree with me in this. Those who have come from other countries and have compared their public services with ours have generally formed this opinion.

In connection with this debate on the President's Address, may I repeat that it is, of course, not a personal Address by the President? It represents broadly the Government's policy. Acharya Kripalani stated that it was too formal an Address. It has to be formal; it is its function to be formal. It cannot be informal. We can be informal in the House. The President has to be formal and has to deal with major matters. May be we may have left out some matters, because we cannot deal with every matter there. We try to bring up some major matters. I submit that whatever statements are made in the President's Address are factually accurate. For instance, in regard to the food situation, they are absolutely accurate. There is no attempt to slur over the situation. In fact, grave concern has been shown in regard to that situation in the President's Address.

Then Acharya Kripalani said that it did not tell us what legislation there was going to be for this session. As a matter of fact, there is going to be very little legislation in this 15-day session. Apart from the two debates —Railway and General—there are going to be three or four very minor Bills which will be brought before the House, and, I hope, passed. Because there was no major legislation, it was not mentioned. It will be mentioned in future, whenever there is any major legislation. That is all I have to say.

श्री महेन्द्र प्रताप (मथुरा) : प्रधान मन्त्री जी कामनवेल्थ के दलदल में फंसे हुए हैं ।

Mr. Speaker: Will the hon. Home Minister be replying to the debate tomorrow?—Whichever Minister may reply, it is enough for my purpose to know if he will reply this evening or tomorrow. In the latter case, the whole of this day may be devoted to general discussion by hon. Members.

The Minister of Parliamentary Affairs (Shri Satya Narayan Sinha): It will be better if the reply is given tomorrow after the Question Hour.

Mr. Speaker: Then till 18-00 hours today, the debate on the President's Address may go on.

Shri Satya Narayan Sinha: The House can sit even longer.

Mr. Speaker: Quorum may not be there.

Shri Manay (Bombay City Central —Reserved—Sch. Castes): Why is it that the Prime Minister has made no reference to the Samyukt Maharashtra and Maha Gujarat issues?

Mr. Speaker: They have been discussed very well already. Now, so far as regulating the debate is concerned, a number of hon. Members are coming to me saying that they have got different groups, five, six, seven and eight. They say that they really belong to different groups having distinctive appellations or particular points of view. I would not like to exclude them; I would like to give them an opportunity. But three or four Members of a group consisting of eight persons speak and then come and insist upon the fifth Member being also called.

Therefore, whenever a chit is sent, hon. Members will kindly see that the name, the division number and also the group are distinctly mentioned to enable me to decide whether I should call upon the Member concerned or not and whether any other Member of the group concerned has already spoken or not. That is the only way in which the debate can be regulated. Otherwise, I shall be calling Members belonging to the same group over and over again, excluding other groups and preventing their views from being placed before the House.

Shrimati Renu Chakravartty (Basirhat): Mr. Speaker, Sir, this debate on the President's Address is taking place at the end of the first year of the Second Five Year Plan and, therefore, we had expected it to be a really inspiring Address. It is not that we people are afraid of facing difficulties in connection with the